IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

ब्रह्मवादिनी लोपामुद्रा

डॉ॰ जया शुक्ला

अतिथि व्याख्याता

संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग

रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय

जबलपुर (म.प्र.)

प्रस्तावना:- ऋषिकाएँ अपने ज्ञान के अनुसार ही ऋषिका पद प्राप्त करती हैं। वेदों की ऋचा या मन्त्र का साक्षात्कार करने वाली महिला ऋषिका है। ऋषिकाओं को ब्रह्मवादिनीयाँ भी कह सकते हैं। आचार्य शौनक ने ब्रह्मवादिनीयों की संख्या २७ बताई है -

घोषा गोधा विश्ववारा अपालोपनिषन्निषत्।

ब्रह्मजाया जुहूर्नाम अगस्त्यस्य स्वसादितिः॥

इन्द्राणी चेन्द्रमाता च सरमा रोमशोर्वशी।

लोपामुद्रा च नद्यश्च यमी नारी च शश्वती॥

श्रीर्लाक्षा सार्पराज्ञी वाक् श्रद्धा मेधा च दक्षिणा।

रात्री सूर्या च सावित्री ब्रह्मवादिन्य ईरिताः॥१

वहीं मधुसूदन ओझा जी 'आधिदेविकाध्याय' में 'ऋषिकासंहिता' के अन्तर्गत ब्रह्मवादिनीयों की संख्या तीस बताते हैं। वेद में ब्रह्मवादिनीयों की संख्या एवं उनके द्रष्टा मन्त्रों की संख्या भी कम है पर महत्त्व अक्षुण्ण है। इन ऋषिकाओं ने वन में रहकर योग उपासनामय गृहस्थ जीवन के साथ ब्रह्म के साथ तादात्म्य स्थापित किया। अतीन्द्रिय मन की चेतना से सत्य को देख, नवीन अनुभूतियों को लेकर विश्व, ब्रह्माण्ड व परमतत्त्व को अनेक ऋषियों आदि के अनुभवों, दृष्टि की व्यापकता एवं साधना से इन ऋषिकाओं ने दैवीय शक्ति की उपलब्धि प्राप्त कर ज्ञान की व्यापकता को व्यक्त किया। आत्मसाक्षात्कार, आत्मानुभूति,

आत्मदर्शन मानव जीवन का परम लक्ष्य व पुरुषार्थ है, बस यही वैदिककाल की इन ऋषिकाओं ने अज्ञान से मुक्त पूर्णज्ञान की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा दी है। ब्रह्मवादिनीयाँ वैदिक युग से लेकर वर्तमान युग की नारियों की प्रेरणास्त्रोत व प्रतिनिधि हैं। तपस्या के द्वारा मानव की वाक् के मर्म से तादात्म्य साधा था। फलतः निष्णात होने के बाद देवी वीणा के स्वरों के अनन्त अर्थों की सिद्धि प्राप्त कर ली। इस विषय में ताण्डविन्दव आचार्य के अनुसार 'जैसे कुशल वादक वीणा से अनन्त स्वर माधुर्य को उत्पन्न करता है, वैसे ही वाक् रूपी वीणा से कुशल प्रयोक्ता वाणी के द्वारा अनन्त अर्थों की सिद्धि करता है। उसके स्वर-सामंजस्य से सब मुग्ध हो जाते हैं। वह जिस नवीन संगीत की तान छेड़ता है उससे सारा राष्ट्र चकित होकर अभिभूत होता है।'२ ऐसी ही ब्रह्मवादिनीयों की दैवी वीणा से स्वर उद्भूत हुए हैं।

ब्रह्मवादिनी लोपामुद्रा वैदिक साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। ब्रह्मवादिनी लोपामुद्रा महर्षि अगस्त्य की पत्नी हैं। लोपामुद्रा के मन्त्र ऋग्वेद एवं यजुर्वेद में पाए गए हैं। लोपामुद्रा परिपूर्ण गृहस्थ जीवन के साथ भी सत्य की प्राप्ति की जा सकती है, इसको बड़ी ही स्पष्टता, दृढ़ता के साथ कहती हैं-

'ये चिद्धि पूर्वे ऋतसाप आसन् त्साकं देवेभिरवदन्नृतानि।

ते चिदवासुर्नह्यन्तमापुः सम् नु पत्नीर्वृषभिर्जगम्युः॥'३

सत्य की उपलब्धि के लिए नैष्ठिक ब्रह्मचर्य अनिवार्य शर्त नहीं है। चरम सत्य की प्राप्ति उन्हें भी हुई है जिन्होंने सपत्नीक परिपूर्ण गृहस्थ जीवन जिया है। स्त्रियाँ भी गृहस्थ जीवन का सुख उपभोग करती हुई पुरुषों की तरह ही परम सत्य को प्राप्त कर सकती हैं। ऋग्वेद का यह मन्त्र ऋषिका की दृढ़ता को प्रकट करता है।

वहीं यजुर्वेद में ब्रह्मवादिनी लोपामुद्रा के पाँच मन्त्र प्राप्त होते हैं। ऋषिका लोपामुद्रा सन्देश देती हैं कि देवता हमारे शरीर में निवास करता है बाहर धरती या आकाश में नहीं। देवता सर्वव्यापी है। यह और कोई नहीं अग्नि है। यह अग्नि प्राण है, शक्ति है, ज्योति है और यही इच्छाशक्ति है। ऋषिका लोपामुद्रा अग्नि प्राण है, प्राण अग्नि इस तथ्य को यजुर्वेद के पाँचों मन्त्रों में प्रार्थना करते हुए व्यक्त करती हैं-

'नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्ते अस्त्वर्चिषे।

अन्याँस्ते अस्मत्तपन्तु हेतयः पावको अस्मभ्यं शिवो भव॥'४

हे अग्निदेव! आप समस्त रसों को आकर्षित करने वाले एवं तेजस्वी हो आपको नमस्कार। आपकी ज्वालाओं को नमस्कार जिससे शत्रुओं को मारा जाता है, विजय प्राप्त की जाती है, ऐश्वर्य में वृद्धि होती है। ऋषिका प्रार्थना करती हैं आपकी ये वज्ररूप ज्वालाएँ हमें बचाकर हमारे शत्रुओं को संतापित करें। यहाँ पावक शब्द का प्रयोग अन्तरिक्ष की अग्नि के लिए है तब भाव यह है कि अन्तरिक्ष स्थित, हे अग्निदेव! हमें पवित्रता दो, हमारा कल्याण करो। इसके बाद ऋषिका लोपामुद्रा कहती हैं-

'नृषदे वैडप्सुषदे वेड बर्हिषदे वेड् वनसदे वेट् स्वर्विदे वेट्॥'५

हे अग्निदेव! मैं आह्वान कर रही हूँ यज्ञाहुति ग्रहण करने के लिए, उन अग्नि देव को, जो मानवों में अधिष्ठित हो, जो जलों के अन्तः में स्थित है जो कुशादि में निवसित है, वृक्षों में स्थापित है और जो अग्नि, स्वर्गलोक में निवास करती है। मानवों के उदर में रहने वाली जठराग्नि को यह आहुति समर्पित है। जलों में निवास करने वाली बडवाग्नि साथ ही दावाग्नि को यह आहुति दी जा रही है। और अग्नि का वह स्वरूप जो स्वर्गलोक स्थित जो सूर्य रूप में, अग्निदेव 'शुचिः' रूप में अधिष्ठित हैं उन्हें आहुति समर्पित है। यहाँ ऋषिका लोपामुद्रा सूक्ष्म शरीर से सम्बद्ध हृत्प्रतिष्ठित अग्नि की, अन्तरिक्ष्याग्नि की जो क्रिया प्रधान है उसकी स्तुति कर रही है। पवमान अग्नि भौतिक जीवन धारक है वही स्थूल शरीर से सम्बद्ध प्राणाग्नि, जठराग्नि, उदराग्नि, पवमान अग्नि कहलाती है। मस्तिष्क के, स्वर्ग के अन्तर्गत कार्य करने वाली शुचि अग्नि जो ज्ञान प्रधान, विज्ञान अग्नि हैं। इन्हीं तीनों अग्नियों की प्रार्थना यहाँ ऋषिका लोपामुद्रा करती है। यहाँ पार्थिव पवमान अग्नि व दिव्य शुचि अग्नि को आहुति देती है। जो कि अग्नि देवता आलस्य प्रमाद रहित, अकर्मण्यता से दूर करता है वहीं दूसरी दिव्य ज्ञान प्राप्त कराता है। तृतीय मन्त्र में ऋषिका कहती हैं-

'ये देवा देवानां यज्ञिया यज्ञियानां संवत्सरीणमुप भागमापसते

अहुतादो हविषो यज्ञे अस्मिन् स्वयं पिबन्तु मधुनो घृतस्य॥'६

इस मन्त्र के द्वारा ऋषिका प्राणाग्नियों की विशिष्टता को बताते हुए कहती हैं प्राणाग्नियाँ ऐसे देव हैं जो बिना स्वाहाकार किए अन्न ग्रहण करते हैं अर्थात् ये देवता जो बिना आहुति दिए स्वयं अन्न का भक्षण करते हैं। ये यजनीय देवों में यजनीय हैं और साथ ही संसार में सम्पन्न यज्ञ में अपना भाग ग्रहण करते हैं। ऋषिका ऐसे देव को इस यज्ञ में स्वयं मधुर सोम, घृत हवि-भाग का पान करने के लिए आमंत्रित करती हैं। वहीं चतुर्थ मन्त्र में लोपामुद्रा कहती हैं:-

'ये देवा देवेष्वधि देवत्वमायन ये ब्रह्मणः पुर एतारो अस्य।

येभ्यो न ऋते पवते धाम किञ्चन न ते दिवो न पृथिव्या अधिस्नुषु॥'७

तृतीय मन्त्र में ऋषिका अग्नि देव की ऐसी विशिष्टता बताती हैं कि वे स्वयं ही अन्न ग्रहण करते हैं। अब चतुर्थ मन्त्र में कहती हैं कि प्राणाग्नियों का स्थान शरीरस्थ इन्द्रियों में बताया साथ ही देवताओं में अधिष्ठान प्राप्त किया। देवत्व का अधिकार प्राप्त किया है। ऋषिका कहती हैं कि प्राणाग्नि के बिना प्राण देवताओं के बिना कोई चेष्टा नहीं होती। प्राण स्पन्दन स्वरूप है। ऋषिका कहती हैं कि जिन प्राण देवों के बिना शरीर किंचित भी चेष्टा नहीं कर सकता। वे प्राण न द्युलोक में हैं, न पृथ्वी में हैं अपितु प्रत्येक इन्द्रिय में विद्यमान हैं।

अन्तिम पाँचवें मन्त्र में अग्नि देव को महान बताती है।-

'प्राणदा अपानदा व्यानदा व र्चोदा वरिवोदाः।

अन्याँस्ते अस्मत्त पन्तु हेतयः पावको अस्मभ्यं शिवो भव॥'८

हे अग्निदेव! तुम प्राणदाः अपानदः व्यानदाः वर्चोदाः वरिवोदाः अभिप्राय है कि तुम प्राण देने वाले, अपान देने वाले, व्यान देने वाले, बलदाता, धनदाता हो। तुम्हारी ज्वालाएँ हमसे अन्य शत्रुओं को संताप पहुँचाएँ और आप हमारे लिए पवित्रकर्ता व कल्याणकारी होओ।

वे अग्नि देव प्राण, अपान, व्यान देते हैं, साथ ही गति, अगति व स्थिति का कारण हैं, उन्हीं से इनकी उत्पत्ति है। सूर्य के दो रूप हैं ज्योति व वर्च इसीलिए प्रातःकाल की आहुति सूर्य के लिए एवं सायंकाल की आहुति अग्नि के निमित्त दी जाती है।९ यहाँ स्पष्ट करना होगा कि ज्योति प्राण है व वर्च अपान है। अग्निहोत्र की दो प्रधान आहुतियाँ हैं। दो की संधि, मेल ही तीसरी व्यान कहलाती है। अग्निहोत्र इन्हीं को जानने के लिए होता है। यही- अ, उ, म् तीन मात्राओं में व्यक्त ब्रह्माण्ड का गीत है। यही अग्निहोत्र की तीन आहुतियाँ 'ॐ भूर्भुवः स्वः'। इन्हीं में प्राण, अपान व व्यान सम्मिलित है। लोपामुद्रा इन्हीं तीनों रूपों की एक साथ तेज व ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए प्रार्थना कर रही हैं।

उपसंहार:- इस तरह ऋग्वेद के २ ऋचाएँ एवं यजुर्वेद के ५ मन्त्र ऋषिका लोपामुद्रा के मन्त्र प्राप्त हैं। लोपामुद्रा नाम निश्चित ही आकर्षित करता है क्योंकि भिन्न है, इसका अर्थ क्या है? यह नाम क्यों प्रसिद्ध है, इस पर विचार किया, खोज की तब ज्ञात हुआ कि प्रसिद्धि है लोपामुद्रा का अपने पति महर्षि अगस्त्य के प्रति अत्यधिक प्रेम व समर्पण था, जिसके कारण उनका स्वयं का व्यक्तित्व पति के व्यक्तित्व में लोप हो गया इसलिए उनको लोपामुद्रा कहा जाने लगा। भारतीय नारी के लिए अत्यन्त प्रभावी एवं प्रेरणादायी व्यक्तित्व लोपामुद्रा का है। लोपामुद्रा का कथन कि दांपत्य जीवन के सुख के साथ ही पूर्ण सत्य की उपलब्धि की जा सकती है, निश्चय ही श्रेष्ठ जनों के लिए अनुकरणीय है। वहीं यजुर्वेद के मन्त्र यज्ञीय अनुष्ठान में कोई भी उपक्रम हो अश्वमेघ, राजसूय, गवामयन या अग्निष्टोम हो अग्निपरिसेचन कर्म के बिना सम्पन्न नहीं होता और अग्नि परिसेचन लोपामुद्रा के मन्त्र से होता है। ब्रह्मवादिनी लोपामुद्रा ने अग्नि के प्राण स्वरूप का प्रत्यक्ष अनुभव किया है। अग्नितत्त्व से ऋषिका का साक्षात्कार ही नहीं हुआ है, अपितु सख्य भाव भी प्रकट होता है वे कहती हैं 'स्वयं यज्ञे' अस्मिन् पिबन्तु मधुनो घृतस्य- वे अग्नियाँ- वे प्राण देवता- इस मेरे यज्ञ में स्वयं सोमपान करें एवं स्वयं ही हविष्यान्न ग्रहण करें।

अगस्त्य ऋषि एवं लोपामुद्रा के विवाह का वर्णन महाभारत वनपर्व, ब्रह्माण्डपुराण एवं स्कन्दपुराण में मिलता है। इस वर्णन के अनुसार अगस्त्य ऋषि को स्वप्न में अपने पूर्वज दिखे, जो कि दुःखी थे, इसका कारण ऋषि का सन्तान विहीन होना था। पूर्वजों की अधोमुखी गति को प्राप्त होता देख ऋषि ने विदर्भ नरेश द्वारा पालिता अयोनिजा सद्गुण सम्पन्न कन्या लोपामुद्रा ऋषिका से विवाह किया। पुराणों में कालंजर माहात्म्य से स्पष्ट होता है कि अगस्त्य ऋषि का प्रथम आश्रम कालंजर पर्वत (विन्ध्यगिरि का भाग) था और अगस्त्य ऋषि एवं लोपामुद्रा का विवाहोपरान्त बहुत सा समय कालंजर पर्वत पर ही व्यतीत हुआ होगा। ऋग्वेद में ऋषिका लोपामुद्रा की मात्र दो ऋचाएँ एवं यजुर्वेद में पाँच मन्त्र प्राप्त होते हैं, जो कि ऋषिका के ऋषित्व

के लिए पर्याप्त हैं। इसके लिए भगवान का वायन (सर्वानुक्रम सूत्र ग्रन्थ २/२४), महीधराचार्य यजुर्वेद के भाष्य (यजुर्वेद १७/११), शौनक के बृहद्देवता (४/५७,५८) में ऋषिका के अस्तित्व की महिमा को स्वीकारते हैं, अतः ऋषिका का ऋषित्व असंदिग्ध है। उनका प्रशस्त कर्म, योगदान अद्वितीय है, अप्रतिम है, अनुपम है।

ब्रह्मवादिनी लोपामुद्रा का कहना है कि सबके शरीर में, इन्द्रियों में देवता का वास है, धरती-आसमान में नहीं। वह देव सर्वव्याप्त है, विभूति, तेज के रूप में वही है। यही देव अग्नि है जो कि तेजस्, प्राण, शक्ति और ज्योति है जो भागवत-संकल्प है। यह निगम क्षेत्र में ऋषिका की महत्वपूर्ण देन है। अद्वैत-आधारित तन्त्र के क्षेत्र में भी ऋषिका को परम सम्मान प्राप्त है। महर्षि सुमेधा 'त्रिपुरा रहस्य' में उनकी महिमा का गान करते हैं। भगवान् परशुराम उनको आदर के साथ स्मरण करते हैं। आचार्य महीधर मुनि विद्यारण्य उनका स्तवन करते हैं। महर्षि दुर्वासा से दीक्षा प्राप्त लोपामुद्रा के साथ उनके पति ऋषि अगस्त्य ने साधना की। तब सपत्नीक श्रीविद्या के गुरु-पंक्ति में पूजित हुए। ऐसे ऋषि के प्रति लोपामुद्रा दृढ़ता के साथ कहती हैं कि हमारे पूर्वज भी जो सत्यस्वरूप थे और उनकी पत्नियाँ तपोनिष्ठ थीं। उन्होंने सत्य की प्राप्ति गृहस्थ सुख अनुभव करते हुए की। पुरुष ही नहीं, स्त्रियाँ भी सत्य की प्राप्ति करती थीं। उनके कृत्य, आचार-विचार अनुकरणीय हैं। ऋग्वेद की दो ऋचाएँ ऋषि अगस्त्य को विचार करने के लिए प्रेरित करती हैं कि तपःसाधना में मैं स्वयं को, अपने गार्हस्थ्य जीवन को ही भूल गया क्या? और अंत में ऋषिका के आग्रह को स्वीकार करने के लिए बाध्य हुए। ऐसी महिला दृष्टा लोपामुद्रा आत्मविश्वास से पूर्ण, कर्मठ व कर्तव्यनिष्ठ नारी जिन्होंने निगम-आगम-तन्त्र में महत्वपूर्ण, सम्मानीय स्थान प्राप्त किया है, जो आज भी भारतीय समाज में, भारतीय नारी के लिए पथ-प्रदर्शिका के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

संस्कृत साहित्य में विदुषियों का योगदान रहा है। विद्वानों के समान ही साहित्य की रचना की है। वैदिक काल में छब्बीस ब्रह्मवादिनीओं के विषय में सूचना प्राप्त होती है। उसी तरह लौकिक साहित्य में अनेक विदुषियाँ - माहला, मोरिका, विकटनितम्बा, शिलाभट्टारिका, वैजयन्ती, विश्वासदेवी के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। निश्चय ही ऋषिका लोपामुद्रा को हम मार्गदर्शिका के रूप में मानते हैं।

सन्दर्भः-

१. बृहद्देवता - २/८२-८४

२. शारवायन आरण्यक - ८/७,१०

३. ऋग्वेद - १०/१७८/२

४. यजुर्वेद - १७/११

५. यजुर्वेद - १७/१२

६. यजुर्वेद - १७/१३

७. यजुर्वेद - १७/१४

८. यजुर्वेद - १७/१५

९. यजुर्वेद - ३/९